संपादकीय

विद्यार्थियों से बेहतरी की उम्मीद

केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड यानी सीबीएसई के तहत इस साल हुई दसवीं और बारहवीं की परीक्षाओं के नतीजे घोषित होने के साथ एक बार फिर इसके आधार पर स्कूली शिक्षा के सकारात्मक और नकारात्मक पहलुओं पर चर्चा स्वाभाविक ही है। इस बार दसवीं कक्षा के नतीजों में 93.12 फीसद और बारहवीं में 87.33 फीसद विद्यार्थियों ने कामयाबी हासिल की है। पिछले कई सालों की तरह इस साल फिर दोनों ही कक्षाओं में लड़कों के मुकाबले लड़कियों ने बेहतर प्रदर्शन किया। दसवीं में लड़कियों की सफलता का प्रतिशत 94.25 रहा, जबकि लड़कों की तादाद इससे करीब दो फीसद कम रही।

दूसरी ओर, बारहवीं के नतीजों में लड़कियों की उपलब्धि लड़कों के सामने छह फीसद ज्यादा अच्छी रही। इस कक्षा में 84.67 फीसद लड़के सफल रहे, जबकि 90.68 फीसद लड़कियों ने बाजी मारी। स्वाभाविक ही इन नतीजों के बाद अब इससे आगे के सफर के लिए कामयाब हुए विद्यार्थी नया रास्ता तलाशेंगे और अब तक हासिल दक्षता और ज्ञान के जरिए नई ऊंचाई की ओर बढ़ेंगे। लेकिन साथ ही इन परिणामों ने समाज से लेकर सरकार तक के लिए कुछ अन्य समस्याओं पर गौर करने का मौका भी मुहैया कराया है। दरअसल, इस साल बारहवीं कक्षा के नतीजों में उल्लेखनीय कमी दर्ज की गई, वहीं दसवीं के परिणाम का भी यही रुख रहा। बारहवीं में इस बार पिछले साल के मुकाबले 5.38 फीसद कम विद्यार्थी कामयाब हुए, जबकि दसवीं में यह गिरावट 1.28 फीसद रही। दसवीं में कम विद्यार्थियों के पास होने के आंकड़े को अगर बड़ा न भी मानें तो बारहवीं में लगभग साढ़े पांच फीसद की कमी चिंता का कारण होना चाहिए। हालांकि पहले के मुकाबले कमतर नतीजे किसी भी रूप में स्वागतयोग्य नहीं माने जाते, आंकड़े या अनुपात में अंतर चाहे जो हो। यह स्थिति तब रही जब पिछले करीब डेढ़-दो सालों से स्कूली पढ़ाई के मामले में अब सहजता आ गई है और कक्षाएं नियमित तौर पर चलने लगी हैं। सवाल है कि स्कूलों में पठन-पाठन के माहौल से लेकर गुणवत्ता में वे क्या कमियां रहीं, जिनका असर इन दोनों कक्षाओं के नतीजों पर पड़ा? क्या कक्षाओं में शिक्षण गतिविधियों और उनकी गुणवत्ता के मामले में प्रदर्शन अपेक्षा के अनुरूप नहीं रह पाया? या फिर विद्यार्थियों की मेहनत और परीक्षा में उनके प्रदर्शन के मामले में कम से कम पहले का स्तर भी बना नहीं रह पाया?

गौरतलब है कि कोरोना महामारी और उसकी वजह से लागू हुई पूर्णबंदी में स्कूलों में नियमित पढ़ाई काफी समय तक बंद रही, जिसका विद्यार्थियों पर काफी हद तक नकारात्मक असर पड़ा था। ज्यादातर विद्यार्थियों के सामने घर में ही रह कर पढ़ाई करने या आनलाइन कक्षाओं के जरिए पढ़ने की मजबूरी थी। संसाधनों और सुविधाओं के अभाव में कई विद्यार्थियों को मुश्किलें पेश आईं। वैसी स्थिति का असर निश्चित रूप से कई विद्यार्थियों के कोमल मन-मस्तिष्क पड़ा होगा। इससे उबरने में शायद वक्त लगे। लेकिन अब हालात सामान्य हो चुके हैं और स्कूली शिक्षा भी नियमित पढ़ाई के मामले में सहज हो गई है।

ऐसे में पठन-पाठन का माहौल बेहतर होने के साथ ही अच्छे नतीजों की अपेक्षा स्वाभाविक है। फिर भी कामयाब होने वाले विद्यार्थियों के आंकड़ों में गिरावट के समांतर सफलता की तस्वीर यह बताती है कि बेहतरी की उम्मीद कायम है। स्कूलों में शिक्षण गतिविधियों, कक्षाओं में नियमित पढ़ाई, शिक्षकों के केवल शिक्षण कार्यों पर अपना ध्यान केंद्रित करने और विद्यार्थियों को बेहतर करने के लिए प्रोत्साहित करने जैसे कुछ अन्य जरूरी उपायों के जरिए परीक्षाओं के परिणामों में सुधार लाना कोई बड़ी चुनौती नहीं है। लेकिन जरूरत स्कूलों में पठन-पाठन का माहौल बेहतर करने और शिक्षकों की भूमिका को गुणवत्ता आधारित शिक्षण में केंद्रित करने की है।

सियासत की धुरी बनने की कोशिश में सचिन

राजनीति

-वेद विलास उनियाल

राजस्थान के सीएम अशोक गहलोत ने एक बयान देकर राज्य की सियासत में तब हलचल मचाई जब कर्नाटक के चुनाव को लेकर खासा घमासान मचा था। राजनीति के मंजे खिलाड़ी और जादूगर कहे जाने वाले अशोक गहलोत ने अपने बयान का समय सोच-समझकर तय किया या फिर इसके भी कुछ निहितार्थ हैं इस पर खासी अटकलें हैं। लेकिन उनकी इस सलाह पर कई निशाने सधे हैं कि 2020 में पार्टी से बगावत करने वाले विधायकों को बीजेपी से लिया पैसा वापस कर देना चाहिए। एक पुराने घटनाक्रम को फिर चर्चा के केंद्र में लाकर उन्होंने कांग्रेस नेता सचिन पायलट के हमलों की धार कुंद करने की कोशिश की है। वह यहीं तक नहीं रुके उन्होंने साथ ही उस समय सरकार बचाने के लिए पूर्व मुख्यमंत्री वसुंधरा को संकटमोचक बताकर बीजेपी में भी आपसी द्वंद्व के लिए अखाड़ा तैयार कर दिया है।

राजस्थान का हाल का सियासी घटनाक्रम भी कई दिलचस्प मोड़ से होकर गुजरा है। निस्संदेह राज्य विधानसभा के चुनाव में कांग्रेस को जीत हासिल दिलाने में सचिन पायलट की खासी भूमिका रही है। पायलट ने ही राजस्थान के ओर-छोर को मथ कर राज्य में कांग्रेस के लिए आधार खड़ा किया था। लेकिन कांग्रेस हाईकमान ने अशोक गहलोत को राज्य का नेतृत्व सौंपा था। सचिन पायलट राज्य के उपमुख्यमंत्री बने। बहुत जल्दी ही पायलट ने इस बात को भांप लिया था कि अशोक गहलोत सत्ता के प्रभाव और वर्चस्व में किसी तरह की हिस्सेदारी करने के लिए तैयार नहीं हैं। राजस्थान की सियासत में एक दौर यह भी आया कि जब लगने लगा कि पायलट कांग्रेस से अलग हो सकते हैं। राजस्थान की सियासत में तब किसी तरह बड़ा उलटफेर होता उससे पहले हाईकमान ने सचिन को पार्टी से बाहर जाने से रोका।

हालांकि इससे पहले बगावती तेवर दिखाने वाले सचिन पायलट को राज्य पार्टी अध्यक्ष और डिप्टी सीएम के पद से हटाने पर पार्टी प्रवक्ता का कहना था कि कांग्रेस ने सचिन पायलट को सब कुछ दिया। वह पार्टी में रहते हुए 26 साल की उम्र में सांसद, 32 साल की उम्र में केंद्रीय मंत्री, 34 साल की उम्र में प्रदेश अध्यक्ष और 40 साल की उम्र में उपमुख्यमंत्री बने हैं। लेकिन पार्टी में उनकी महत्वाकांक्षा ज्यादा बढ़ गई है। इसके जवाब में सचिन पायलट ने कहा था कि उन्होंने पार्टी को जीत हासिल दिलाने में पांच साल अथक मेहनत की। इसके बाद जब पार्टी को सत्ता हासिल हुई तो उन्होंने अपना हक जताकर कोई गलत नहीं किया। हालांकि उस समय कांग्रेस हाईकमान ने कई मुलाकात और बातचीत के दौर के बाद सचिन पायलट को आश्वस्त किया था कि देर-सवेर पार्टी आलाकमान उनके पक्ष में कोई फैसला लेगा। लेकिन कांग्रेस बदली परिस्थितियों में राजस्थान में बदलाव का कोई कदम उठाने से हिचकती रही। वहीं राजस्थान में अशोक गहलोत ने सत्ता ही नहीं संगठन पर भी अपनी पकड़ बनाकर रखी। बदले ढर्रे में कांग्रेस हाईकमान भी बड़े क्षत्रपों को बहुत संकेत देने की स्थिति में नहीं है। खासकर कांग्रेस में जब अशोक गहलोत को पार्टी अध्यक्ष बनाए जाने के लिए कवायद हुई थी उस समय के घटनाक्रमों ने साबित करा दिया था कि अशोक गहलोत राजस्थान में किस तरह अपना वर्चस्व रखते हैं। कांग्रेस आलाकमान के लिए भी साफ संकेत था कि राजस्थान में अशोक गहलोत की सत्ता को आसानी से छेड़ा नहीं जा सकता। इसका असर यही हुआ कि गहलोत की सत्ता चलती रही और सचिन पायलट अवसर की प्रतीक्षा करते रहे। सचिन पायलट के लिए बगावती तेवर का नुकसान यह भी हुआ कि उनके हाथ से अध्यक्ष पद भी गया और डिप्टी सीएम का पद भी उन्हें खोना पड़ा। उनका बीस विधायकों को लेकर दिल्ली में डेरा डालना भी काम नहीं आया।

पंजाब विधानसभा चुनाव के नतीजों ने भी कांग्रेस को इस बात के लिए सजग कर दिया कि वह राजस्थान में अकारण किसी तरह का जोखिम मोल न ले। खासकर यह देखते हुए कि अमरेंद्र सिंह के नेतृत्व में पंजाब में कांग्रेस किसी स्तर पर कमजोर हो रही थी। अमरेंद्र जहां विधायकों पर अपनी पकड़ खो रहे थे वहीं राजस्थान में ठीक विपरीत अशोक गहलोत ने अपने किले को पूरी तरह मजबूत किया। कांग्रेस आलाकमान इस स्थिति को समझता था कि राजस्थान में सत्ता बदलाव का फैसला पार्टी को मुश्किल में ला सकता है। इसलिए अशोक गहलोत की सत्ता बरकरार रही।

अशोक गहलोत ने सत्ता और संगठन दोनों स्तर पर सचिन पायलट को उभरने के लिए कोई अवसर नहीं दिया। ऐसे में राजस्थान के चुनाव आने से पहले सचिन पायलट के लिए अपनी भूमिका को तलाशना जरूरी हो गया है। यह निश्चित है कि चुनाव के समय भी चुनाव का संचालन और टिकटों के वितरण में गहलोत की भूमिका ही प्रभावी रहेगी। ऐसे में सचिन पायलट के लिए अब वो समय आया है जब उन्हें कोई न कोई फैसला लेना ही होगा। ऐसे में उन्होंने सबसे पहले जनमानस की थाह लेने और इलाकों को मथने का निर्णय लिया है। गौर करने लायक बात यह भी है कि अशोक गहलोत ने अपना बयान भी उस धौलपुर में दिया है जो पूर्वी राजस्थान का इलाका है। यहीं अलवर, टोंक, करौली, सवाई माधोपुर, दौसा जैसे इलाके आते हैं। यही सचिन पायलट का प्रभाव क्षेत्र माना जाता है। सचिन पायलट अजमेर से जयपुर की पदयात्रा निकाल रहे हैं। इसे राजस्थान की सियासत में आरपार की लड़ाई के तौर पर भी देखा जा रहा है।

वैसे सचिन पायलट ने इससे पहले भी सरकार के विरोध में धरना प्रदर्शन किया है। हाल में उन्होंने इस बात पर एक दिन का अनशन किया था कि राज्य सरकार वसुंधरा राजे के समय के कथित भ्रष्टाचार के खिलाफ कार्रवाई क्यों नहीं कर रही है। दरअसल सचिन पायलट वसुंधरा राजे को घेरने से ज्यादा अशोक गहलोत को निशाने पर ले रहे थे। अशोक गहलोत ने राज्य विधानसभा चुनाव के समय इस बात को उठाया था कि सत्ता में आने के बाद वह वसुंधरा सरकार के कथित भ्रष्टाचार के मामलों की जांच करेंगे। इसके साथ ही उनकी आगामी जनसंघर्ष पदयात्रा को लेकर पोस्टर दीवारों में नजर आए हैं। इन पोस्टरों में कहीं भी कांग्रेस पार्टी का चुनाव चिन्ह नहीं है। इसमें कांग्रेस के अध्यक्ष मलिकार्जुन खड़गे, राहुल गांधी या प्रियंका गांधी की तस्वीर नहीं है। इन पोस्टरों में भावभंगिमा में सचिन पायलट की आक्रोश वाली मुद्रा झलकती है और वह मुट्ठी बांधे नजर आते हैं। सियासत में इन संकेतों को समझा जा सकता है।

दरअसल, सचिन पायलट को अहसास है कि इस बार के उनके बगावती तेवर उनके पार्टी से निष्कासन का कारण भी बन सकते हैं। लेकिन जिस तरह सचिन के कदम उठ रहे हैं उससे उनकी तैयारियों का भी अहसास होता है। अपने बयानों में फिलहाल वह बीजेपी से भी दूरी बरत रहे हैं। खासकर जनसंघर्ष पदयात्रा की थीम को उन्होंने वसुंधरा सरकार के समय के कथित भ्रष्टाचार की जांच से जोड़ा है।

अपने ही प्रधानमंत्रियों का दुश्मन पाकिस्तान

मुद्दा

-आर.के. सिन्हा

पाकिस्तान में पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान की गिरफ्तारी पर हैरान होने की जरूरत नहीं है। हालांकि वह रिहा हो चुके हैं। पाकिस्तान में इमरान से पहले भी कई प्रधानमंत्रियों को जेल की हवा खानी पड़ी है। सबसे पहले 1960 में सैनिक तानाशाह अयूब खान ने प्रधानमंत्री हुसैन शहीद सुहरावर्दी को जेल भेजा था। सुहारावर्दी देश के विभाजन से पहले बंगाल राज्य के प्रधानमंत्री थे। तब किसी राज्य के मुखिया को प्रधानमंत्री ही कहा जाता था। जब 1946 में जिन्ना के डायरेक्ट एक्शन के आह्वान के बाद कोलकाता में हिंसा भड़की तब सुहारावर्दी ही बंगाल के प्रधानमंत्री थे। कहते हैं कि उन्होंने हिन्दुओं के खिलाफ हिंसा को रुकवाने की कोई चेष्टा नहीं की थी। हिंसा को हवा जरूर दी।

खैर, उनके बाद जुल्फिकार भुट्टो को जालंधर में पैदा हुए जिया उल हक ने जेल भेजा। उसके बाद भुट्टो को फांसी भी हुई। भुट्टो के बाद उनकी बेटी बेनजीर भुट्टो को भी जेल जाना पड़ा। फिर उनकी हत्या भी हुई। नवाज शरीफ और शाहिद अब्बासी ने भी प्रधानमंत्री के रूप में जेल की सलाखों के पीछे वक्त बिताया है। यही पाकिस्तान का चरित्र है। वहां पर निर्वाचित प्रधानमंत्रियों को पद से हटाने और गिरफ्तारकिये जाने की परंपरा पुरानी है।

हां, इमरान खान की गिरफ्तारी के बाद पाकिस्तान जिस तरह से जलने लगा है, उस तरह के हालात पहले कभी देखने में नहीं आये। इस लिहाज से इमरान खान की गिरफ्तारी थोड़ी अलग जरूर है। इमरान खान को करप्शन के आरोपों में जेल में डालने के कारण पाकिस्तान जलने लगा है। सारे देश का गुस्सा इमरान खान के सियासी शत्रुओं से ज्यादा सेना पर है। अवाम का कहना है कि पाकिस्तान को कभी पटरी पर आने ही नहीं दिया सेना ने। उसने देश में जम्हूरियत की जड़ों को मजबूत नहीं होने दिया। यह पाकिस्तान की जनता की सोच में बहुत बड़े बदलाव का संकेत भी है।

एक दौर में पाकिस्तान की अवाम अपनी सेना के लिए जां निसार करती थी। पर अब उसे जन्नत की हकीकत समझ आने लगी है। उसके सामने सच्चाई आ गई है। उसे पता चल गया है कि सेना के पूर्वी पाकिस्तान में कत्लेआम के कारण पूर्वी पाकिस्तान बांग्लादेश बना। उसे समझ आ गया है कि सेना ने अकारण भारत पर 1965 और फिर 1971 में हमले किए और फिर मुंह की खाई।

पाकिस्तान ने पिछले साल देखा था जब इमरान खान की सरकार को रावलपिंडी में बैठे जनरलों ने, करप्ट पाकिस्तानी मुस्लिम लीग, पाकिस्तान पीपल्स पार्टी और कुछ छोटे राजनीतिक दलों को एक मंच में लाकर गिरवाया था। अब इमरान खान की गिरफ्तारी और वहां पर कठपुतली सरकार की गलत नीतियों के कारण महंगाई से बेहाल नाराज जनता सड़कों पर आ गई है। जनता ने सेना के दफ्तरों से लेकर सेना के आला अफसरों के बंगलों को आग के हवाले कर दिया है। यह तो एक दिन होना ही था। पाप का घड़ा फूटना ही था। प्रधानमंत्रियों की गिरफ्तारी से हटकर बात करें तो पाकिस्तान सेना ने बार-बार निर्वाचित सरकारों को गिराया है। अयूब खान, याहया खान, जिया उल हक और परवेज मुशर्रफ के समय पाकिस्तान में लोकतंत्र कराहता रहा।

पाकिस्तान की सेना ने देश के विश्व मानचित्र में सामने आने के बाद अहम राजनीतिक संस्थाओं पर भी प्रभाव बढ़ाना शुरू कर दिया। अयूब खान पर तो आरोप थे कि उन्होंने मोहम्मद अली जिन्ना की बहन फातिमा जिन्ना को ही मरवा दिया था। जिया उल हक ने पाकिस्तान को घोर कठमुल्ला मुल्क भी बनवाया। पाकिस्तान का शिक्षित समाज उन्हें इसके लिये कोसता है। हालांकि उनकी विमान हादसे में मौत में भी सेना का ही हाथ बताया जाता है। सेना को ही लियाकत अली खान और बेनजीर भुट्टो के कत्ल का भी जिम्मेदार माना जाता है। लियाकत अली खान 1946 में पंडित नेहरू के नेतृत्व में बनी अंतरिम सरकार में वित्त मंत्री थे। वे घोर हिन्दू विरोधी थे। उन्होंने 1946 में अंतरिम सरकार का बजट भी पेश किया था। उसे हिन्दू व्यापारी विरोधी बजट माना गया था।

इमरान खान आरोप लगाते रहे हैं कि हैं कि उनकी सरकार को सेना ने चलने नहीं दिया। वे तब के सेनाध्यक्ष कमर जावेद बाजवा को आड़े हाथ लेते भी रहे थे। वे कहते थे कि उनकी सत्ता की बागडोर उनके हाथ में नहीं थी। उनका इशारा सेना की तरफ ही था। पाकिस्तान में हालत बेहद नाजुक हैं।

पाकिस्तान धधक रहा है। इमरान खान के हक में पंजाब, खैबर, बलूचिस्तान और सिंध उठ खड़े हुए हैं। एक तरह ये जन आन्दोलन इमरान के पक्ष में कम और सेना के विरुद्ध ज्यादा है। जाहिर है, पाकिस्तान जनता अब अपने ही देश के कथित रहनुमाओं की घटिया हरकतों के कारण थक गई है। वह जिन्हें महान समझती थी वे सब के सब गटर छाप निकले। उन्होंने पाकिस्तान को दुनिया का सबसे अंधकार में रहने वाला देश बना दिया।

आजकल

मौसम की तल्खी

हाल के दिनों में मौसम के मिजाज में आये अप्रत्याशित बदलाव ने मौसम विज्ञानियों को चौंकाया है। सामान्य लोग भले ही कहते रहे हैं कि मई में फरवरी-मार्च के मौसम का अहसास हो रहा है, क्या मई में गर्मी आयेगी? लेकिन यह स्थिति इतनी सामान्य बात नहीं है। इस परिवर्तन के गहरे निहितार्थ हैं और हमारे मौसम चक्र के लिये यह शुभ संकेत कदापि नहीं है। मौसम के बदलावों से हमारी वनस्पति, फसलों व फलों के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और उनका स्वाभाविक विकास भी बाधक होता है। कहा जा रहा है कि यह असामान्य मौसम आज के दौर का नया सामान्य है। पिछले मार्च में अचानक गर्मी का बढ़ जाना और मई में तापमान का सामान्य से कम हो जाना अच्छा संकेत नहीं कहा जा सकता। मार्च में गेहूं की फसल के पकने के समय बढ़ी गर्मी से इसके उत्पादन में कमी आने की बात सामने आई थी। चौंकाने वाली बात यह भी है कि मई माह में हिमालय पर्वत श्रृंखलाओं की ऊंची चोटियों पर हिमपात हुआ। निस्संदेह, इस मौसम में जम्मू-कश्मीर, उत्तराखंड व हिमाचल में कम ऊंचाई वाले इलाकों में हिमपात होना आश्चर्य की ही बात है। ये दुर्लभ घटनाएं हमारी चिंता का विषय होनी चाहिए। कहने को तो कहा जा रहा है कि रिकॉर्ड निम्न तापमान गर्मी से राहत देने वाला है, लेकिन मौसम के मिजाज में बदलाव हमारी चिंता का विषय होना चाहिए। यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है कि मौसम में इस तरह के उतार-चढ़ाव दरअसल जलवायु संकट का विस्तार बताये जाते हैं। आशंका जतायी जा रही है कि इस बदलाव का असर मानसून की गुणवत्ता पर भी पड़ सकता है। जो एक गंभीर विश्लेषण की मांग करता है। मौसम विज्ञानियों को आशंका है कि पृथ्वी के लगातार गर्म होने के बीच मौसम के चरम की ऐसी घटनाएं हमारे सामान्य जीवन पर प्रतिकूल असर डाल सकती हैं। जिसकी चुनौती का समय रहते मुकाबला जरूरी है। उल्लेखनीय है कि पिछले दिनों भारत व पाकिस्तान के कुछ हिस्सों में भीषण गर्मी देखी गई थी। वैज्ञानिक आशंका जता रहे हैं कि वर्ष 2031 से 2060 के बीच भीषण गर्मी पड़ सकती है।

भाषाई आचरण : गहराता संकट

दृष्टिकोण

-गिरीश्वर मिश्र

अक्सर कहा जाता है कि यह संसार शब्दात्मक है। इस अर्थ में यह सही है कि मानव व्यवहार के निजी और सामाजिक दायरों में आने वाले लगभग हर व्यवहार में भाषा की अहं भागीदारी होती है। हमारा समूचा ज्ञान, शिक्षण, संचार और अमूर्तन आदि का काम करने में भाषा ही प्रमुख उपादान होती है। महान विचारक भर्तृहरि ने कभी यह कहा था कि इस विश्व में किसी भी किस्म का संप्रत्यय (कॉन्सेप्ट) शब्द के बिना सोचा ही नहीं जा सकता तो वे गलत नहीं थे। सचमुच हमारी सारी की सारी सवेदनाएँ, मानस-रचनाएँ और चेष्टाएँ भाषा में ही निबद्ध होती हैं। साथ ही किसी के द्वारा बोली जाने वाली भाषा उस व्यक्ति की आंतरिक सोच को भी प्रतिबिम्बित करती है। यदि किसी चीज या बात के लिए हमारे पास शब्द नहीं होते हैं तो उसकी उपस्थिति की कल्पना करना भी मुश्किल हो जाता है।

दूसरी ओर जो वस्तु वास्तव में न भी हो अर्थात् जिसकी सत्ता ही नहीं है, पूरी तरह कपोल कल्पित है, यदि उसे भी कोई शब्द दे दें तो वह शब्द उस (कल्पित वस्तु) के अस्तित्व में होने का अहसास और आभास दिला सकता है। फिर हम ऐसे शब्दों का व्यवहार में उपयोग भी करने लगते हैं। इस तरह बाहर की दुनिया में किसी चीज के होने या न होने के लिए बहुत हद तक हमारी भाषा ही जिम्मेदार होती है। चूँकि मन में होने वाला चिंतन प्रकट भाषा का ही एक सूक्ष्म रूप होता है विचारों की हमारी अपनी पूँजी भी भाषा की शक्ति के अनुरूप कम या ज़्यादा होगी। बाहर प्रकट रूप में जो भाषा दिखने-सुनने में आती है उसे वैखरी और उसके पीछे अव्यक्त विचार वाली भाषा को मध्यमा कहा गया है । जो अच्छे विचारक होते हैं वे अच्छी भाषा का भी उपयोग करते हैं।

भाषा के न होने पर दुनिया अंधेरे में रहेगी। भाषा की जद में आकर ही चीजें अपना अर्थ खोज पाती हैं। शायद बाहर और अंदर की दुनिया इन दोनों को प्रकाशित करने वाला प्रकाश का स्रोत भाषा ही है। वैसे भाषा एक सामाजिक उत्पाद होती है। इसकी सहायता से समाज को समझा जा सकता है और खुद को समाज के सम्मुख पेश कर समझाया जा सकता है। हमारा जानना यानी ज्ञान और उस ज्ञान को खुद जानना और दूसरों को जनाना भाषा के द्वारा ही सम्भव होते हैं। सच कहें तो ज्ञान का आवास-स्थान भाषा ही है और ज्ञान उसी में बसता है। खुद के लिए और दूसरों के लिए ज्ञान की उपस्थिति, उसका संचार और प्रस्तुति, मुख्यतः भाषा के माध्यम द्वारा ही सम्पन्न होती है। ऐसे में हमारी प्रतिष्ठा भी भाषा के प्रयोग के साथ जुड़ जाती है। भाषा समारे सामर्थ्य का आधार बनती है और न केवल सामान्य बर्ताव को सम्भव करती है बल्कि भावनाओं को भी दूसरों तक पहुँचाती हैं। इन बातों को पहचान कर भाषा-प्रयोग की अनेक शैलियाँ विकसित हुई हैं। भारतीय चिंतन में शब्द की तीन शक्तियों- अभिधा, लक्षणा और व्यंजना पर काफ़ी विचार हुआ है जो शब्दों के वाच्यार्थ या शब्दार्थ, लक्ष्यार्थ और व्यंगार्थ को व्यक्त करते हैं। सर्जक साहित्यकार ऋंगार, वीर, वीभत्स, हास्य, रौद्र, भक्ति आदि विभिन्न प्रकार के रसों को भाषा के साथ ही पाठक या दर्शक के साथ साझा करते हैं। ऐसे ही अलंकारों का उपयोग करते हुए वे अर्थ की नाना प्रकार की छवियों को निखारते हैं । तंत्र और मंत्र की दुनिया में शब्द के और भी गहन रूप मिलते हैं। हमारे सामाजिक जीवन में भाषा के सशक्त और संतुलित उपयोग से यदि कोई बात बन जाती है। इसका उल्टा तब होता है जब ग़लत भाषा के उपयोग से बात बिगड़ जाती है। कुल मिला कर भाषा हमको रचती है और हम उससे अलग हो ही नहीं सकते। भाषा में प्रयुक्त शब्द हमारे जीवन के लिए आधार का काम करते हैं। बाहर ध्वनि रूप में जो व्यक्त भाषा सुनी जाती है वह भाषा का पूरा संसार नहीं है। भाषा हमारे अंदर भी होती है जो अव्यक्त होने से दिखती नहीं है। विचारों पर ध्वनि का रंग चढ़ा कर या ध्वनि में लपेट कर जो वैखरी भाषा बाहर दिखती है वह तो अंदर मौजूद भाषा का निष्पादन (परफॉर्मेंस) होता है। उसके पहले भाषा बुद्धि या मानस के स्तर पर आंतरिक भाषा मध्यमा के रूप में सक्रिय रहती है। संचार के लिए इसी मनोगत भाषा पर ध्वनि का मुलम्मा चढ़ाया जाता है। हम सबका रोजमर्रे का अनुभव है कि जब मन में कुछ उधेड़-बुन चलती रहती है तब अव्यक्त स्तर पर भाषा सक्रिय रहती है। भारतीय विचारक तो यह भी मानते हैं कि व्यक्त भाषा, आंतरिक विचार वाली अव्यक्त भाषा के साथ ही भाषा का एक गहन सार्वभौमिक आद्य स्तर भी होता है। इन सभी रूपों को आत्मसात करना सरल नहीं है क्योंकि भाषा को समझने के लिए भी भाषा के उपकरण का उपयोग किया जाता है।

उपर्युक्त मशिकिल के बावजूद सत्य यह भी है कि शब्द-व्यापार इस पूरे संसार को व्याप्त किए हुए है। कोई भी व्यापार यदि नियमों और क़ायदों के अनुसार चले तो व्यवस्था बनी रहती है और किसी का अहित नहीं होता है।